अनुबोधन, खण्ड 1, अंक 3, सितम्बर 2025, पृष्ठ 134–141
ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट), 3108-1185 (ऑनलाइन)
प्रकाशित: 30 सितम्बर 2025
जर्नल वेबसाइट: https://anubodhan.org

वासुदेव शरण अग्रवाल कृत भारत की मौलिक एकता : एक अवलोकन

डॉ० मल्लिका मंजरी*

अवलोकित रचना मूलतः 1954 ई0 में भारतीय भंडार, इलाहाबाद से प्रकाशित हुई थी। विभाजन के प्रायः छः वर्ष बाद भारतीय एकत्व पर अग्रवाल का यह लेखन बहुत मायने रखता है। अग्रवाल विभाजन की त्रासदी के साक्षी थे। स्वतंत्रता मिलते–मिलते देश का बड़ा हिस्सा देश से टूट गया। इसकी बड़ी वजह धार्मिक–सांप्रदायिक अतिवाद था और यह दोनों पक्षों (हिन्दू–मुस्लिम) से था। तनाम चेष्टाओं के बाद भी हमारे शीर्ष नेता न सिर्फ इस अतिवाद को नियंत्रित करने में बल्कि अंततः विभाजन रोकने में भी विफल रहे। उस त्रासद विभाजन के बाद भी भारत को बहुजातीय, बहुभाषीय व बहुराष्ट्रीयता वाले देश के रूप में चित्रित करने वाले महानुभावों की कमी न थी। यदा–कदा वे उस विविधता को पृथकता के रूप में चित्रित करते रहते थे। विशेषतः उत्तर–दक्षिण के विवाद के संदर्भ मे। ऐसे में इस पुस्तक का प्रणयन महत्त्वपूर्ण था क्योंकि इसमें भारत में व्याप्त बहुजातीयता, बहुभाषा, बहुअस्मिता व बहुसंस्कृति आदि सारे अवांतर अन्तर्विरोधों के बावजूद उनमें अन्तर्निहित एकत्व भाव को उभारा गया है।

पुस्तक का समर्पण लेखक ने महामना मदनमोहन मालवीय जी को किया है। लेखक ने उपरोक्त 'एकत्व' के विचारों से परिचित होने का सारा श्रेय उन्हें व उनके विश्वविद्यालय को दिया है।[1] भूमिका में इस देश की प्राचीनता को स्मरण के साथ एक भूमि, एक राष्ट्र, एक जन के भाव को श्रेष्ठ व एकमेव सत्य एवं प्रांत, जनपद आदि के हितों को मातृभूमि से पृथक करने के भाव को राष्ट्र व मातृभूमि के खंडन की संज्ञा दी है। उस समय देश के एकत्व के प्रश्न को सर्वमहत्त्वपूर्ण बताते

*असिस्टेंट प्रोफेसर, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग, तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार, E-mail: mallikatmbu@gmail.com

हुए उपज रहे विद्वेष को दुःखद बताया है।[2]

लेखक ने भूमि का एकत्व जन व संस्कृति के एकत्व के बिना अपूर्ण माना है[3] और प्रांत, जाति, धर्म भाषादि सबको राष्ट्र के समक्ष तुच्छ बताया है। इसी संदर्भ में भारतभूमि की दीर्घकालीन मौलिक एकता व विभाजन से उस पर पड़े आघात को भी लेखक ने रेखांकित किया है। भेदभाव की बात को सोचने व स्मरण करने को 'मध्यकालीन मनोवृत्ति' की संज्ञा देते हुए उसे संप्रीति–समन्वय का नाशक बताया है। इसी संदर्भ में देश की मौलिक एकता के प्रश्न को विचारते हुए देश के इतिहास पर दृष्टिपात किया है और इतिहास के हवाले से भारतीय संस्कृति को समन्वय का महान प्रयोग कहा है क्योंकि यहाँ कई प्रकार के अनमिल तत्त्वों ने साथ मिलकर रहने की प्रवृत्ति स्वीकारी जिसमें दूसरे के प्रति मैत्रीभाव व सहिष्णुता रही है। इसी से यहाँ सांस्कृतिक एकता रही है।

अथर्ववेद में भूमिवासी जनों, उनकी भाषा, धर्मों के भेद को स्वीकार करने की उक्ति एवं ऋग्वेद में एक ही सत्य के विभिन्न वक्ता होने (एक सद्विप्रा बहुधा वदंत्ति) को उन्होंने यहां की सांस्कृतिक एकता का बीजमंत्र बताया है।[4]

वासुदेवशरण के गुरू डॉ0 राधाकुमुद मुकर्जी ने भी 1913 में अपनी रचना 'दी फंडामेंटल यूनिटी ऑफ इंडिया' में इसी तत्त्व का प्रतिपादन कर चुके थे। वासुदेवशरण ने तत्प्रदर्शित मार्ग को ही अपनी इस रचना हेतु चुना।

प्रथम अध्ययन में लेखक ने प्राचीन भारतीय साहित्य में प्रदर्शित एकता, भारत के नामकरण, मातृभूमि के प्रति प्रेम, भाषाई लिपिगत अंतर्संबंध, साहित्यिक शैली, शिक्षा पद्धति, कला, तीर्थस्थान, धर्म–दर्शन आदि में एकत्व की भावना को ढूंढा है। विशेषतः संस्कृत साहित्य व ब्राह्मी लिपि, तीर्थों पर उन्होंने बहुत जोर दिया है। जिसे विभिन्न धर्म–संस्कृति वालों ने अपनाया। लेखक ने इस अध्याय को युक्तियाँ नाम दिया है जिन्हें आधार बनाकर उन्होंने यह पुस्तक लिखी है।[5]

प्रथमतः देश के नामकरण भारत शब्द की उत्पत्ति–निरूक्ति पर विचार करते हुए तदर्थ प्राचीन भारतीय साहित्य महाभारत, रघुवंश, वायुपुराण में प्रदत्त तत्संबद्ध संदर्भों का उपयोग किया है और हिन्दुस्तान नाम हेतु ऋग्वेद, ईरानी अभिलेखों यूनानी, चीनी, अश्व यात्रियों के विवरणों का। नामकरण पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने इस बात पर

ध्यान दिया है कि भारतवासियों ने भारत नाम अपनाया एवं विदेशियों ने सिन्धु–हिन्दू परक नाम इण्डिया, इन–टू व हिन्दूस्तान नाम का प्रयोग किया जबकि सिन्धु–हिन्दू नाम का मूल ऋग्वेदीय 'सिंधु' शब्द से निःसृत है।[6]

देश की भूमि पश्चिम में वैदिक साहित्य, पुराण, महाभारत प्रोक्त देश के भूगोल संबद्ध विवरणों को खोजते हुए संबद्ध नदी, पर्वत, नगर मार्ग आदि की पहचान की है। मार्कण्डैय पुराण व महाभारत के अपने अध्ययन में भी अग्रवाल ने पहचान किया है। प्राचीन नामों की आधुनिक पहचान खोज कर उन्होंने उत्तर में मध्येशिया के प्रामीर से दक्षिण समुद्र तट एवं पूर्व में असम से पश्चिम में बलूचिस्तान तक देश की इकाई को साहित्य–संस्कृति का अंग निर्मित बताया है। बृहत्तर भारत को उन्होंने आसुरी से नहीं बल्कि विशुद्ध सांस्कृतिक विजय बताया है। समय–समय पर साहित्यों में भारत भूमि की सीमा में परिवर्तन को भी संज्ञान में लिया है।[7]

अथर्ववेदीय पृथ्वी सूक्त की विवेचना करते हुए उन्होंने भूमि, जन व उसकी संस्कृति को इनके आपसी संबंध को दिखाया है। वासुदेवशरण ने मातृभूमि के स्थूल रूप को भूमिवासी जन की एकता का आधार बताया है। पृथिवीपुत्र निबंध संग्रह में भी इस आशय का लेख लिखा है। सव्य, ऋत व राष्ट्र–संस्कृति के परस्पर संबंध को उन्होंने एकत्व का आधार बताया है।[8]

देश में प्राचीन काल से तीर्थों व तीर्थयात्राओं की परंपरा थी। विविध प्राचीन साहित्यों में तत्संबंधी विवरण आए हैं। हिमालय, गंगा, संगम, कन्याकुमारी आदि स्थानों के प्रति भारतीय साहित्य प्रोक्त देवत्त्व भाव को लेखक ने देश के दूरातिदूर स्थित जनों को आपस में जोड़ने वाला सूत्र बताया है। यह बात भी उन्होंने ध्यान में रखी है कि ब्राह्मणों के अतिरिक्त बौद्धों जैनो ने भी तीर्थ की संकल्पना को महत्त्व दिया।[9]

देश के आर्थिक–भौतिक जीवन में कृषि, पशुपालन, व्यापार (जन–थल दोनों) के महत्त्व को विवेचित करते हुए कृषि व व्यापार को भूमि वासियों को आपस में जोड़ने वाले कारक के रूप में देखा है। कृषि को इस संदर्भ में लेखक ने बहुत महत्त्व दिया है क्योंकि बाहर से आई विदेशी जातियां भी धीरे–धीरे इससे जुड़ी और इसी के साथ इस भूमि से भी जुड़ी।[10] आर्य दुविड़, किरात, निषाद सभी के आर्थिक जीवन में कृषि का महत्त्व था। व्यापार ने भी यहाँ के लोगों को आपस में जोड़ा।

देश के कोने–कोने तक पहुँचने के मार्ग ढूँढे गए जो प्राचीन साहित्यों में वर्णित है। जैसे– महाभारत, उपनिषद आदि। नाप–तौल के मानक व व्यापारिक नियम भी प्रायः सर्वत्र पालित होते थे। श्रेणी, निगम जैसी संस्थाओं ने व्यापारिक गतिविधियों को विनियमित कर इस एकत्व को बढ़ाया। यही वजह है कि सत्ता परिवर्तन के बाद भी आर्थिक ढाँचा स्थिर रहा और इसी तरह संस्कृति का ढाँचा भी।[11]

भारतवासी विविध जातियों की चर्चा करते हुए लेखक ने उनमें हुए संघर्ष के साथ उनके परस्पर संबंधों मेलजोल, जैसे– धार्मिक विश्वासों, रीति–रिवाजों का आपस में संलयन, भाषा–लिपी, आर्य संस्कृति के प्रसार एवं अनार्यों के हिन्दूकरण को भी लेखक ने देश की मौलिक एकता का सूत्र बताया है। इस हिन्दकरण में ब्राव्यस्टोम जैसे– संस्कारों, पौराणिक धर्मों के भागवत आदि संप्रदायों के आंदोलन की भूमिका को लेखक ने भिन्न विचार के लोगों को एक साथ जोड़ने की परिपाटी के रूप में देखा है।[12] प्राचीन भारतीय नरेशों के अपने से भिन्न जातियों में किए गए विवाह–संबंधों को भी लेखक ने एकत्व के प्राचीन सूत्रों में गिना है।[13]

भाषा व साहित्य को भी लेखक ने एकत्व का सूत्र बताया है। संस्कृत, पाली, प्राकृत का विभिन्न लोगों व धर्मों के मानने वालों द्वारा अपनाया जाना भी आपसी मेलजोल को बढ़ाने वाला सिद्ध हुआ। जैसे– बौद्धो–जैनियों ने गुप्तकाल में अपनी प्रिय भाषा पालि–प्राकृत को छोड़कर संस्कृत में लेखन किया। संस्कृत गुप्काल के पूर्व प्रथम शताब्दी से ही फिर साहित्य–सृजन की प्रिय भाषा बनने लगी। पिटक व अंग साहित्य का संस्कृत अनुवाद किया गया। अभिलेखादि भी संस्कृत में लिखे गए। गुप्तों द्वारा स्थापित साम्राज्यीय एकत्व भी संस्कृत का पूरे साम्राज्य में प्रसार किया। मध्येशिया से लेकर दक्षिण भारत, दीपांतर भारत तक संस्कृत राष्ट्रीय ही नहीं बल्कि अंतराष्ट्रीय धार्मिक, साहित्यिक भाषा बनी। लेखक ने गुप्तयुग को संस्कृत के प्रसार में अन्य युग से अधिक श्रेय दिया है। विदेशी यात्रियों जैसे, युवान च्वांग आदि के संस्कृत सीखने संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद करने, प्रणिधि संबंध में संस्कृत ग्रंथों का आदान–प्रदान, द्वीपांतर सहित अन्य देशों के छात्रों द्वारा संस्कृत अध्ययन एंव उनकी भूमि में संस्कृत का राजभाषा के रूप में प्रसार, जावादि द्वीपों में बहुतायत संस्कृत अभिलेखों का उत्कीर्णन आदि प्रमाणों के आधार पर संस्कृत का प्रसार एवं इस प्रसार से देश के

विभिन्न भागों के आपस में जुड़ाव को स्थापित करने का सफल यत्न किया है।

संस्कृत में काव्य व विज्ञान आदि शास्त्रों के साहित्य सृजन व इसकी दीर्घ परंपरा–प्राचीनता को भी लेखक ने उठाया है। संस्कृत से विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं के जन्म और वैदिक भाषा में लोक जीवन के शब्दों का प्रयोग एवं संस्कृत व्याकरण में सर्वत्र पाणिनीय नियम का पालन देश के विभिन्न मस्तिष्कों को परस्पर जोड़ने वाला बताया है। यही भूमिका बाद में पालि, प्राकृत एवं बाद में अपभ्रंश की रही। इनके आपसी सह संबंध को भी एकत्व सूत्र ही माना है।[14]

लेखक ने भाषावत लिपियों को भी एकत्ववर्धक माना है। और ब्राह्मी लिपि को इस विषय में सर्वोपरि बताया है। उनके अनुसार अशोकीय अभिलेखों का पूरे देश में ब्राह्मी में उत्कीर्ण होना एवं बाद में भी संस्कृत लेखों व साहित्यों का ब्राह्मी में होना इस बात का प्रमाण है कि इस लिपि ने भी देश को एकत्त्व सूत्र में बांधा। प्रायः सभी भारतीय लिपियाँ ब्राह्मी से निःसूत्र हैं। बाद में देवनागरी ने ब्राह्मी का स्थान लिया है।

वैदिक साहित्य को भी एकत्त्व सूत्र बताते हुए लेखक ने उसकी पाठ पद्धति, व्याकरण, उच्चारण एवं ज्योतिष, श्रौतसूत्रों प्रोक्त संस्कार, अनुष्ठान उनकी पद्धति का सर्वत्र एक रूपता को इस हेतु प्रमाण रूप में प्रस्तुत किया। सारे भारत में दर्शन का पठन पाठन हुआ। एक–एक विचारधारा से देश के कोने–कोने से लोग जुड़े। एक ही ग्रंथ पर विभिन्न क्षेत्रों के विद्यानों ने लेखन किया। अग्रवाल की इस स्थापना को इस तथ्य से भी बल मिलता है कि बादरायण व्यास कृत ब्रह्मसूत्र पर दक्षिण के शंकर व रामानुज ने भाष्य लिखे थे। धार्मिक के साथ लौकिक साहित्य को भी देश को एकत्व में बाधने वाला बताया है। कालिदास, अश्वघोष, भास, माद्य, वात्स्यान, कौटिल्य का सारे देश में पढ़ा जाना, विविध ज्ञान विधाओं, विविध शास्त्रीय शैलियों जैसे दंडी के काव्य लक्षण, कथा साहित्य, नीतिग्रंथ, सुभाषित साहित्य, आयुर्वेद, ज्योतिष, योग (अष्टांग योग) का अध्ययन समस्त भारतवर्ष में हुआ। योग पर जोर देते हुए इसे देश की विशिष्ट पहचान एवं आयुर्वेद को चिकित्सा विद्या का राष्ट्रीय शास्त्र की संज्ञा दी है। चरक–सुश्रुत का सदियों तक देश के कोने–कोने में पठन–पाठन व उपजीव्य प्रणयन को लेखन में स्वकथन के प्रमाणार्थ प्रस्तुत किया है। लेखक ने उक्त सारे प्रयत्नों को जनता

में स्थूल विविधताओं से उपर मौलिक एकत्व के प्रचार का कारक रूप में स्थापित किया है।

राजनीति एकता को भौगोलिक एकता पर आधृत बताते हुए देश की राजनीति के क्षेत्र में एकत्व पर दृष्टि दी है। पुराण व महाभारत प्रोक्त भुवनकोश, तीर्थवर्णन, भू आकृति आदि के वर्णन जिनमें देश की सीमा, पर्वत, नदी, जनपद, वनादि का विवरण है उसे राजनीतिक एकत्व के बिना असंभव बताया हैं। सार्वभौम चक्रवर्ती की संकल्पना व अश्वमेधादि यज्ञों को राजनीतिक एकता को बढ़ानें वाला माना है।

अग्रवाल ने जनपदीय विभाजन को स्थानीय एकता के सुदृढीकरण का कारक बताते हुए इस की वजह से बड़े–बड़े राज्यों के ऐतिहासिक विघटन के बाद भी जनपदीय जीवन की ईकाई के स्थिरीकरण को संभव बताया है। लेखक ने वैदिक साहित्य में अभिषेक संस्कार व उसकी प्रतिज्ञा, राजनीतिक प्रणालियों, जैसे सार्वभौम, चक्रवर्ती व साम्राज्य को भी एकत्व का वाची बताया है। इस कड़ी में मौर्य साम्राज्य को महत्त्व देते हुए उसे पूरे देश में समान शासन संस्था, जनजीवन की एकरूपता, मापतौल, अंतराष्ट्रीय चेतना दीर्घ राजमार्गों से व्यापार में वृद्धि आदि का संस्थापक बताया है। अशोक के कालसी (देहरादून) लेख में आए पाँच विदेशी राज्यों के नामों को प्राचीन भारत के प्रधिधि संबंध के साथ ऐतिहासकि–सांस्कृतिक संबंधों का बोधक बताया है। जिससे भारतीय संस्कृति का प्रवाह दिग्–दिगंत तक फैला और जंबूद्वीप की माला में भारत को मध्ण्यमणि माना गया। स्वर्णयुगीन द्वीपांतर विजय को सर्वमहत्त्वपूर्ण धर्म विजय बताते हुए उसे गुप्तों के एकछत्र व सुसमृद्ध राज्य का परिणाम घोषित किया है। पुराणों में भारत की सीमा हिमालय से कन्याकुमारी, असम से द्वारिका एवं द्वीपांतर की गणना को भी अग्रवाल ने गुप्तयुगीन राजनैतिक एकत्व का परिचायक बताया है एवं तत्संबंधी पुरातात्विक प्रमाण भी पेश किये है।[15]

इस प्रकार अंतः व बाहय भू प्रदेश की एकता, परस्पर संबद्धता को लेखक ने विदेशी विवरणों, महाभारत पुराण आदि साहित्य के हवाले से सिद्ध किया है। पूर्वमध्यकाल में भी यह एकत्व जारी रहा। जनपद, शासन, आय, मापतौल में एकत्व आदि को पूर्वमध्य काल के ग्रंथ अपराजित पृच्छा के उदाहरण से सिद्ध करते हुए ऋग्वेदोक्त

समानता के मंत्र में आए समान वचन, मन्त्रण आदि भावों के आधार पर इस देश में एकता को प्राचीन काल से विद्यमान माना है।[16]

इस पुस्तक में लेखक ने 'भूगोल', 'देश के नामकरण', 'भाषा–साहित्य', 'लिपि दर्शन', 'विविध शास्त्रीय विधाओं', 'राजनीतिक एकतव', 'भक्ति' आदि सांस्कृतिक आंदोलनों में सारे देश की भागीदारी वैदिक शिक्षा की पद्धति व प्रसार आदि आधार भूत तथ्यों के आधार पर इस देश में उपस्थित एकत्व व उसकी प्राचीनता को प्रमाणित किया है। विभेद, विविधता एवं उनके बीच सदियों से पलती इस एकत्व की भावना को लेखक ने कई कोनों से उभारा है। विभाजन की त्रासदी लेखक पर इतनी हावी है कि वह किसी भी भेदभाव वाली बात को मध्ययुगीन सोच की संज्ञा देते हैं। एकत्व और विभेदों के साथ एकत्व पर वे बार–बार जोर देते हैं। पुस्तक एक समय सापेक्ष रचना है। यह भावना लेखक की अन्य रचना इतिहास दर्शन व ऐतिहासिक का दृष्टिकोण में भी व्यक्त कर चुके थे।

संदर्भ :

1. अग्रवाल, डॉ0 वासुदेवशरण, 2017, भारत की मौलिक एकता, (प्र0 सं0), नई दिल्ली राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, (भूमिका), पृ0 5
2. वही, पृ0 9–12
3. वही, पृ0 13–15
4. वही, पृ0 15
5. वही, पृ0 1–6
6. वही, पृ0 7–19
7. वही, पृ0 20–37
8. वही, पृ0 38–53
9. वही, पृ0 54–73
10. वही, पृ0 74–76
11. वही, पृ0 78–82
12. वही, पृ0 84–94
13. वही, पृ0 95–100
14. वही, पृ0 96–100

15. वही, पृ0 111–124
16. वही, पृ0 125–29

Copyright © 2025 Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License (CC BY-NC-ND 4.0).